लक्ष्मीनारायण लाल के नाटकों का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ सरिता,
एसोसिएट प्रोफेसर,
श्याम लाल कॉलेज (सांध्य),
दिल्ली विश्वविद्यालय

डा.गिरीश चन्द्र जोशी,
एसोसिएट प्रोफेसर,
श्री अरविन्द महाविद्यालय (सांध्य),
दिल्ली विश्वविद्यालय.

शोध सार

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के हिंदी नाट्य–साहित्य में नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। वे उन मूर्धन्य नाटककारों में से हैं जिन्होंने अपनी सार्थक सृजनात्मकता और रंग–दृष्टि से आधुनिक हिंदी नाटक व रंगमंच को एक व्यापक फलक प्रदान करते हुए उसे पर्याप्त समृद्धि, प्रसिद्धि व लोकप्रियता प्रदान की । हिंदी नाटक और रंगमंच के प्रति पूर्णतः समर्पित डॉ लाल एक बहुमुखी प्रतिभा–संपन्न रचनाधर्मी साहित्यकार थे। नाटककार ,कहानीकार ,उपन्यासकार ,जीवनीकार , समालोचक और एक स्वतंत्र चिंतक के रूप में डॉ.लाल ने आधुनिक हिंदी साहित्य को अपनी रचनाशीलता से बखूबी परिचय कराया है। रचनाधर्मी डॉ.लाल के बहुमुखी–रूपों में सबसे सशक्त,प्रखर और लोकप्रिय बनकर उनका नाटककार रूप ही उभरता है। नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल केवल एक सफल नाटककार ही नहीं थे, अपितु एक कुशल अभिनेता, निपुण रंग–निर्देशक ,प्रयोगधर्मी रंग–शिल्पी और नाट्य–समीक्षक के रूप में भी सुविख्यात थे।

बीज शब्दः *नाटक का वस्तुगत रूप, नाटक और रंग्मंच, विविध शैलियाँ, रंगमंचीय प्रस्तुति, भाषा*

प्रस्तावना

वस्तुतः हिंदी नाटक व रंगमंच को एक सही दिशा व दृष्टि प्रदान करने वाले आजादी प्राप्ति के बाद के हिंदी नाटककारों में यशस्वी मोहन राकेश के बाद लक्ष्मीनारायण लाल का नाम तेजी से उभरकर सामने आता है। बाबू भारतेंदु हरिश्चंद्र की सोई हुई रंगमंच–विहीन नाट्य–परंपरा को नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल ने एक नवीन व महत्वपूर्ण मोड़ प्रदान किया और इस प्रकार वे हिंदी रंगमंच–आंदोलन के एक महत्वपूर्ण नेता बने। डॉ दशरथ ओझा ने इनके नाटकों की समीक्षा करते हुए लिखा है कि–:" इनकी नाट्य–कृतियों में इतना वैविध्य है, प्रयोगों की इतनी बहुलता है, विचारों का इतना विस्तार है, प्रश्नों की इतनी भरमार है कि जो भी इनके नाटक पड़ता अथवा रंगमंच पर देखता है वह विचारों, समस्याओं प्रश्नों, की एक लंबी कतार साथ लेकर घर लौटता है।"[1] डॉ. लाल नाट्य–सृजना के क्षेत्र में ऐसे समय में आए जबकि हिंदी के पास–" रंगमंच की दृष्टि से बहुत नाटक नहीं थे और उसे सार्थक एवं आधुनिक चेतना से जुड़े नाटकों की तलाश थी , साथ ही नवीन रंग–शिल्प की खोज थी ,उस समय इन्होंने निरंतर तीव्र गति से नाट्य–रचना करके नाटक और रंगमंच को एक–दूसरे का पर्याय बनाया और हिंदी नाटक के लिए नवीन राहों की संभावनाओं का अन्वेषण किया।"[2] कहना होगा कि उन्होंने

निरंतर श्रेष्ठ नाटकों के सृजन द्वारा न केवल हिंदी नाटकों के कोष को ही समृद्ध किया अपितु गुणात्मक दृष्टि से भी उसके भंडार में श्री वृद्धि की। "नाटक लिखा नहीं जाता, रचा जाता है" की स्थापना करने वाले डा. लाल का नाटक–लेखन नवीन भाव–बोध का ध्योतक है। उनकी "सबसे बड़ी विशेषता है कि वे अपने स्वस्थ संस्कारों को अपनी नाट्य–कृतियों में फौवारे की तरह बरसाते हैं।"[3] नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल के प्रायः प्रत्येक नाटक में कथ्य एवं शिल्प की दृष्टि से एक नवीन मार्ग खोजने का प्रयत्न दिखलाई पड़ता है । इसके साथ ही , भारतीय एवं विदेशी नाटकों का सुभग समन्वय इनके नाटकों में हुआ है । यथार्थवादी नाटकों से अपना नाट्य–जीवन प्रारंभ करते हुए प्रतीकात्मक, मिथकीय, लोकनाट्य ,लीलानाट्य से होते हुए उनकी यह नाट्य–यात्रा भारतीय रंगभूमि के उन नाटकों पर आकर रुकी , जिनमें यथार्थ में कल्पना हो , दृश्यत्व से उभरता काव्य हो , कथाकार ,सूत्रधार ,नट–नटी हो , गीत– संगीत–नृत्य हो । 'अंधा कुआं'(1955) से अपनी नाट्य–यात्रा प्रारंभ करने वाले डॉ. लाल ने अपनी तीन दशक की नाट्य–यात्रा के दौरानकृ कथा विसर्जन(1987)कृतक हिंदी नाट्य–जगत को लगभग 30 मौलिक नाटक प्रदान किए , जिनमें अंधा कुआं,मादा कैक्टस, दर्पण, सूर्यमुख , मिस्टर अभिमन्यु, कर्फ्यू, अब्दुल्ला दीवाना ,व्यक्तिगत ,एक सत्य हरिशचंद्र जैसी कुछ कथ्य ,शैली ,शिल्प व रंगमंच के आधार पर श्रेष्ठ कालजयी कृतियां हैं जिनसे कोई भी नाटक और रंगमंच गौरवान्वित हो सकता है।

प्रयोगधर्मी नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल ने समाज की विसंगतियों, विद्रूपताओं तथा ज्वलंत प्रश्नों को नाटकों का कथ्य बनाते हुए आधुनिक जीवन के विविध पक्षों की झांकियां अपने नाटकों में पेश की हैं। स्वयं नाटककार के शब्दों में दृ"मैं ऐसे नाटक लिखना चाहता हूं जिनमें कोई बदसूरती बेनकाब कर दी गई हो ,कोई घिनौना नासूर घाव साफ करके दिखा दिया गया हो , स्वप्न में रोते हुए इंसान के आंसुओं को मूर्त कर दिया हो।"[4] इसीलिए इनके 'अंधा कुआं'–1955– से लेकर 'कथा विसर्जन'–1987–तक के सभी नाटकों में आधुनिक युग–बोध को सर्वथा नवीन आयामों द्वारा रंग–प्रस्तुति दी गई है ।

नाट्य–रचना के विभिन्न स्तरः––नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल का नाट्य–सृजन सन् 1955 से शुरू होकर लगभग तीन दशक तक(सन् 1987 तक) निरंतर गतिशील रहा । निरंतर श्रेष्ठ नाटकों का सृजन करके , हिंदी नाटकों के कोश को समृद्ध करने वाले नाटककारों की सूची में इसलिए उनका नाम अग्रगण्य है। लाल का नाटककार व्यक्तित्व उनके नाटकों में समय के साथ–साथ क्रमशःविकसित होता चला है,जिसको निम्न तीन चरणों में देखा जा सकता है :––

प्रथम चरण : सन् 1955 से 1962 तक :––– अंधा कुआं(1955) ,मादा कैक्टस(1959),सुन्दर रस(1959),सूखा सरोवर(1960), तीन आंखों वाली मछली(1960),नाटक तोता मैना(1960), दर्पण(1961),रातरानी(1962), रक्त कमल(1962) ।

द्वितीय चरण :–– सन् 1963 से 1975 तकः–– सूर्यमुख(1968), कलंकी(1969), मिस्टर अभिमन्यु(1971), कर्फ्यू(1972), अब्दुल्ला दीवाना(1973), गुरु (1974), नरसिंह कथा(1975), व्यक्तिगत(1975) ।

तृतीय चरण :–– सन् 1976 से 1987 तकः––– एक सत्य हरिशचंद्र(1976), यक्ष प्रश्न(1976), संस्कार ध्वज(1976), चतुर्भुज राक्षस(1976), सबरंग मोहभंग(1977), गंगा माटी(1977), सगुन पंछी(1977), पंचपुरूष(1978), राम की लड़ाई(1979), कजरीवन(1980), लंका कांड(1983), अरुण कमल एक(1984) ,मन्नू(1984), बलराम की तीर्थ यात्रा(1984) कथा विसर्जन(1987) ।

लक्ष्मीनारायण लाल के नाट्य–कर्म का प्रथम सोपान है 'अंधा कुआं'। इससे पूर्व डा.लाल एकांकी लिखते रहे, जो उनके प्रारंभिक–संग्रह 'ताजमहल के आंसू' तथा 'पर्वत के पीछे' में आगे–पीछे संग्रहित हैं। अपनी इस प्रथम नाट्य–कृति में ग्रामीण परिवेश में आर्थिक संघर्ष के कारण उत्पन्न होने वाले सामाजिक और पारिवारिक द्वंद्व का सफल मनोवैज्ञानिक चित्रण नाटककार ने किया है। इतिवृत्त–शैली और नाटककार की प्रथम नाट्य–रचना होने के कारण इसमें शैली व शिल्प की दृष्टि से कोई उल्लेखनीय विशेषता नहीं दिखलाई पड़ती। फिर भी, नाटक के द्वारा अपनी सार्थकता की तलाश की दृष्टि से डा. लाल की यह शुरुआत महत्वपूर्ण कही जाएगी। रंग–शिल्प एवं प्रस्तुतीकरण की दृ ष्टि से यह एक सफल नाट्य–रचना है क्योंकि इसमें दर्शकों को बांधे रखने की क्षमता विद्यमान है।

'मादा कैक्टस' अपने कथ्य, शैली व रंग–शिल्प की दृष्टि से नाटककार लाल का एक अभिनव प्रतीकात्मक नाटक है, जिसमें स्त्री–पुरुष के आपसी संबंधों को लेकर एक नवीन दिशा खोजने का प्रयास किया गया है। नाटक की पूरी संवेदना 'कैक्टस' पौधे के प्रतीकत्व पर आधारित है। नाटककार ने वनस्पति जगत की दंतकथा, कि मादा कैक्टस के संपर्क में आने पर नर कैक्टस सूख जाता है ,पर वह नहीं सूखती, को नाटक के नायक अरविंद के जीवन–दर्शन के विश्लेषण के लिए प्रतीकवत् स्वीकार किया है। किंतु नाटक के अंत में, नर कैक्टस अरविंद के संपर्क का अभाव मादा कैक्टस मीनाक्षी को सूखा देता है और इस प्रकार, 'मादा कैक्टस' के संपर्क में आकर नर कैक्टस के सूख जाने की वैज्ञानिक अवधारणा को यहां उलट दिया गया है। आलोच्य नाटक के सभी पात्र हमारे समाज का प्रतिनिधित्व करते हैं। नाटककार ने मनोविज्ञान का आश्रय लेकर अपने पात्रों का जीवंत व यथार्थवादी रूप प्रस्तुत किया है। नाटक के प्रमुख पात्रों में अरविंद, सुधीर, मीनाक्षी और सुजाता के नाम उल्लेखनीय हैं। प्राचीन एवं नवीन मूल्यों का सुंदर संघर्ष प्रस्तुत करने वाला नाटककार लाल का यह नाटक वस्तु एवं शिल्प, दोनों ही स्तर पर एकदम आधुनिक है। 'अंधा कुआं' की अपेक्षा नाटककार की यहां जीवन की पकड़ बहुत गहरी और पैनी बन पड़ी है। डा.नरनारायण राय के अनुसारकृ "परंपरागत समस्या–नाटक, सामाजिक नाटक(समाज सुधार वाले) और ऐतिहासिक नाटकों की परंपरा में विषय,रंग–प्रयोग और नाट्य–शिल्प तीनों ही दृष्टि से 'मादा कैक्टस' एक युगांतर स्पष्ट करता है"[5] रंगमंच की समस्त आवश्यकताओं से संयुक्त इस नाटक में नाटककार ने इस दृष्टि से कतिपय नवीन प्रयोग भी किए हैं जो इस नाटक की उपलब्धि हैं। वस्तुतः 'मादा कैक्टस' हिंदी नाटक और रंगमंच के क्षेत्र में डा. लक्ष्मीनारायण लाल का एक अभिनव प्रयोग एवं मील का पत्थर साबित होता है।

'दर्पन' लक्ष्मीनारायण लाल की नाट्य–यात्रा में एक महत्त्वपूर्ण इकाई के रूप में प्रतिष्ठित है । इस नाटक में एक स्त्री,पूर्वी को अपने व्यक्तित्व की खोज, अपने भीतर के मानव से साक्षात्कार में भटकते हुए दिखाया गया है। वास्तव में, यह प्रत्येक व्यक्ति की लिए आत्म–साक्षात्कार का नाटक है जो व्यक्ति को स्वयं उसी के सामने खड़ा करके उससे आंखें चार करने को विवश करता है । प्रवृत्ति और निवृत्ति के द्वंद्वं को निरूपित करने वाला यह नाटक यथार्थवादी शैली एवं शिल्प पर आधारित है । नाटककार ने शिल्प पर अधिक बल न देकर कथ्य पर अधिक बल दिया है । पूर्वी (दर्पन), हरिपद्म, पिताजी व सुजान नाटक के प्रमुख चरित्र हैं। भाषा पात्रानुकूल होते हुए भी दर्शन की गंभीरता को अपने में समाहित किए हुए हैं। पूरा नाटक सहज रंगधर्मी और अभिनय है। 'दर्पण' यदि नारी के अंतर्द्वंद्वं की कहानी कहता है तो 'रातरानी' नारी के आन्तरिक व्यक्तित्व की कथा बखान रहा है। नाटककार ने आधुनिक

भौतिकवादी परिवेश तथा आदर्शवादी विचारधारा के संघर्ष की पृष्ठभूमि में स्त्री पुरुष के पारस्परिक संबंधों का विश्लेषण किया है। प्रसिद्ध नाट्य–समीक्षक डॉ नेमिचंद्र जैन का मत है कि–"'रातरानी' हिंदी में आधुनिक नाट्य–लेखन के प्रारंभ का सूचक है।"[6] 'कुंतल' को रातरानी मानकर नाटककार ने नारी को रातरानी की तरह सुख प्रदान करने वाली सिद्ध किया है। शिल्प की दृष्टि से नाटक में कोई नवीनता परिलक्षित नहीं होती है। कुंतल, जयदेव, निरंजन, सुंदरम और माली बाबा नाटक के प्रमुख चरित्र है । यथार्थवादी रंगमंच को अपनाते हुए नाटककार ने अपने इस नाटक में रंगमंच–पक्ष और साहित्य–पक्ष दोनों का अपूर्व समन्वय किया है। 'रक्तकमल' गांधीवादी विचारधारा से प्रभावित एक सामान्य नाटक है जिसमें समसामयिक देशव्यापी प्रांतीयता, जातीयता एवं सांप्रदायिकता के चित्रण से बाह्य समस्याओं का दिग्दर्शन हुआ है। स्वयं नाटककार लाल की स्थापना है कि"प्रस्तुत नाटक अपने अयथार्थ समाज, युग तथा इसकी चेतनाभूमि से लिखा गया है।'[7] शिल्प के स्तर पर, अयथार्थवादी रंगमंच के रंग–तत्वों से इसका निर्माण किया गया है। नाटक का अंत आदर्शवादी एवं उपदेशात्मक बन पड़ा है। महाभारत की एक प्रख्यात कथा को आधार बनाकर रचा गया 'सूर्यमुख' डा. लाल का प्रथम पौराणिक नाटक है जो रचनात्मक स्तर पर सबसे अधिक विवादास्पद नाटक सिद्ध हुआ। कृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न और कृष्ण की अंतिम पत्नी बेनुरती के सहज प्रेम–संबंध को निरूपित करते हुए नाटककार ने मनुष्य की संशयपूर्ण स्थिति तथा गहन आत्म–साक्षात्कार का सशक्त अंकन अपने इस नाटकान्तर्गत किया है। किंतु नाटककार द्वारा प्रणय–संबंधी मूल्यगत क्रांति को आधुनिकता की झोंक में दिया गया,एक चौंका देने वाला रूप आम भारतीय के लिए बचा पाना कठिन प्रतीत होता है। नाट्य–शिल्प पारंपरिक होते हुए भी सुगठित है। भाषा–प्रयोग की दृष्टि से यह नाटक दुर्बल हो गया है। फिर भी, उसकी बिंबात्मक्ता एवं प्रतीकात्मकता सराहनीय कही जाएगी। अपने अगले मिथकीय नाटक 'कलंकी' में नाटककार ने कथ्य, शैली एवं शिल्प के स्तर पर नाट्य–रचना की पिछली परंपरा को नकारने की एक सफल कोशिश की है। नाटक में कलंकी अवतार के हिंदू मिथक के द्वारा मध्यकालीन व आधुनिक मानव के धर्ममय और पापमय रूपों का पर्दाफाश करने की नाटकीय कोशिश प्रेक्षक को सम्मोहित करती है। शिल्प की दृष्टि से यह एक बेजोड़ कृति है जिसकी कथावस्तु, पात्र, संवाद, भाषा और वातावरण सभी लीक से हटकर है। लोककथा, मिथक, प्रतीक, नृत्य, संगीत, गीतादि के अनेक प्रयोग यहां किए गए है । रंगमंच स्तर पर नाटक में नई संभावनाओं के लिए मार्ग बनाते हुए मुक्ताकाश–रंगमंच की खोज दृष्टिगोचर होती है। डा. लाल के शब्द इसकी पुष्टि करते हैं––' इसका हर प्रस्तुतीकरण इसका नया जन्म होगा और हर निर्देशक,अभिनेता और रंग–शिल्पी इसका स्वतंत्र रचनाकार होगा । मैं कहीं भी बीच में नहीं आता । यह कृति आपकी है , मैं केवल माध्यम था।"[8]

महाभारत के प्रख्यात चरित्र 'अभिमन्यु' के संदर्भ को लेकर लिखा गया 'मिस्टर अभिमन्यु' शीर्षक नाटककार लाल की नाट्य–यात्रा का एक अत्यंत जीवंत, लोकप्रिय और सबसे सफल नाटक है। नाटकान्तर्गत भारत की मौजूदा नौकरशाही व भ्रष्ट राजनीति का बड़े ही सुंदर और प्रभावी ढंग से भंडाफोड़ किया गया है। 'अभिमन्यु' के पौराणिक चरित्र में आधुनिक युग–बोध का आरोपीकरण करते हुए नाटककार ने 'राजन' के रूप में उस ईमानदार व आदर्श व्यक्ति की छटपटाहट का चित्रण किया है जो भ्रष्ट व अनैतिक मूल्यों के प्रति संघर्ष करना चाहता है किंतु परिस्थितियों के झंझावात के समक्ष वह स्वयं को चक्रव्यूह में घिरे 'पुराण–कालीन अभिमन्यु' की स्थिति में पाता है। इसी कारण वह व्यवस्था के चक्रव्यूह को तोड़ नहीं पाता तथा मजबूरीवश आत्मसमर्पण कर देता है। पूरे नाटक में हमारे

परिवेश के यथार्थ को उसकी संपूर्ण कटुता एवं विषमता के साथ उघाड़– कर रख दिया गया है। शिल्प की दृष्टि से लाल का यह दो अंकीय नाटक बहुत सशक्त व प्रभावी बन पड़ा है । क्या भाषा, क्या संवाद और क्या शैली ?–– सभी धरातलों पर 'मिस्टर अभिमन्यु' श्रेष्ठ नाट्य–कृति है और इसीलिए नाटककार लाल के नाटकों में इसका सर्वाधिक बार मंचन हुआ है। यथार्थवादी–शिल्प का प्रयोग करते हुए नाटककार लाल ने अपनी रंग–कुशलता एवं परिपक्वता का सुंदर परिचय प्रेक्षकों को दिया है । 'कर्फ्यू' नाटक में 'मिस्टर अभिमन्यु' के सामाजिक परिवेश की अपेक्षा व्यक्ति की आंतरिकता के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण द्वारा सामाजिक परिवेश के नए मूल्यों की स्थापना की गई है। प्रयोगशील प्रवृत्ति का परिचय देते हुए नाटककार ने आधुनिक जीवन के तनाव और विघटन के लिए आधुनिकता की 'बोल्डनेस' का खुलकर प्रयोग किया है। और इस प्रकार वैवाहिक–जीवन की एक नवीन बुनियाद रखते हुए, दांपत्य जीवन के संतुलन के लिए शारीरिक और मानसिक पाबंदियों के कर्फ्यू को तोड़ना आवश्यक बताया है। कथा एवं शिल्प दोनों ही दृष्टि से नाटककार लाल का यह नाटक अत्याधुनिक बन पड़ा है। नाटककार ने प्रयोगशील प्रवृत्ति का परिचय देते हुए शुद्ध यथार्थवादी रंगमंच को अपने इस नाटक में अपनाया है। नाटक का सफलतापूर्वक मंचीयकरण इसकी मंचीयता स्वतः सिद्ध करता है।

आपातकाल के दौर में लिखा गया 'नरसिंह कथा' नाटककार लाल की एक अन्य पौराणिक रचना है जिसमें नरसिंह कथा के पुराण प्रसिद्ध संदर्भ को मौलिक अर्थ प्रदान करते हुए आधुनिक युग–बोध से जोड़ने का उपक्रम उपलब्ध होता है। नाटक के पात्र विभिन्न मनोवृत्तियों के प्रतीक हैं। इस नाटक का प्रारंभ और अंत पर्याप्त आकर्षक बन पड़ा है। रंगमंचीय दृष्टि से यह नाटक लाल का संभवत सबसे बड़ा नाटक है। कुछेक दृश्य–विधान जटिल होते हुए भी पूरा नाटक मंचीय है। लीला–नाटकों की दिशा में 'व्यक्तिगत' नाटक लक्ष्मीनारायण लाल का एक मील का पत्थर साबित होता है। मूलतः स्त्री–पुरुष के संबंधों और उनके मध्य के चिरंतन तनाव का चित्रण करते हुए नाटककार ने औद्योगिकीकरण के फलस्वरुप अमानवीयकरण व पतनोन्मुख समाज तथा मनुष्य के बहुआयामी रुप को मैं, वह और श्रीमती आनंद जैसे सीमित–पात्रों द्वारा उघेड़कर रख दिया है। नाटक की "हर वस्तु, हर घटना समसामयिक जीवन–अर्थों को उद्घाटित करती चलती है। यहां हर चीज उपयोग के बाद अर्थहीन वस्तु है और व्यर्थ कूड़े की भांति फेंक दी जाती है। रचनाकार लक्ष्मीनारायण लाल का अति–संयमी नाट्यकर्मी रूप इस 'व्यक्तिगत' में अभिव्यक्त हुआ है।"[9] भाषा व शिल्प की दृष्टि से यह एक प्रयोगशील नाट्य–कृति है ।

कथ्य, शैली एवं रंग–दृष्टि से 'एक सत्य हरिश्चंद्र' शीर्षक नाटक डा.लाल की नाट्य–यात्रा के विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। निम्न वर्ग के हरिजनों(लौका और उसके साथियों) की सत्ताधारी, शक्तिशाली एवं पूंजीपति लोगों द्वारा (देवधर आदि) शोषित,पीड़ित और अपमानित होने की मार्मिक–कथा को नाटक की कथावस्तु में प्रस्तुत किया गया है। मिथक और आधुनिक जीवन को एक साथ समन्वित करते हुए नाटककार ने मिथक के प्रयोग की एक नवीन दिशा का संकेत किया है। पूरा नाटक जनजीवन और उसके मूल्यों का नवीन दस्तावेज पेश करता है। शिल्प की दृष्टि से 'एक सत्य हरिश्चंद्र' नाटककार लाल के परिपक्व नाट्य–शिल्प का सशक्त प्रमाण है। नाटक "विषय वस्तु और कला दोनों ही धरातलों पर, विजयश्री है, अप्रतिम है।"[10] हरिश्चंद्र के सत्यवादी चरित्र को क्रांतिमूलक रूप में प्रस्तुत करते हुए नाटककार ने प्राचीन नाट्य–शिल्प के साथ–साथ लोकनाट्य, नौटंकी, रामलीला, पारसी थिएटर आदि का सफल प्रयोग किया है और इस रूप में इसे पूर्णतः. अपनी ही

धरती और मिट्टी की गंध से परिपूर्ण नाट्य–रचना बनाया है। लक्ष्मी नारायण लाल के नाट्य–कर्म का अंतिम पड़ाव है––'कथा विसर्जन'। आलोच्य नाटकान्तर्गत नाटककार ने पाश्चात्य और आधुनिकता की चकाचौंध से घिरे मानव के अपनी सनातन परंपरा और मूल से कटने का सुन्दर चित्र पेश किया है। नाटक के विशिष्ट पात्र 'मां' के द्वारा डा.लाल ने भारतीय परंपरा और शाश्वत् जीवन–मूल्यों की रक्षा करने का मूल्यवान संदेश प्रेषित किया है।

निष्कर्ष

अंततः यही कहा जा सकता है कि कथ्य, शैली, शिल्प और रंगमंचीयता के आधार पर नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल ने श्रेष्ठ कालजयी नाट्य–कृतियां हिन्दी जगत को प्रदान की हैं जिनसे कोई भी नाटक व रंगमंच गौरवान्वित हो सकता है। लाल के सभी नाटक हमारी त्रासद यात्राओं, बीहड़ यंत्रणापूर्ण जंगलों के परिक्रमणों, मोहभंग से मिले दुखान्तों में संकल्पित हस्तक्षेप करते हैं। वे अपने संपूर्ण मिजाज, स्वभाव, आचरण से हमारी खोज, पहचान और हमारी अस्मिता के रक्षा–व्रतों का एक ज्वलन्त आलेख और तहरीर हैं जो सनदयाफ्ता हैं। ये किन्हीं पूर्व तैशुदा मुद्दों से नहीं जुड़े हैं। इनका लगाव तो हमारे अनिर्णीत, निर्विकल्प ,संख्यात्मक और धुरीहीन आचरण से है. ....ये हमारे सामान्यजन की दुर्नियतियों ,विसंगतियों के ऐसे पक्षधर हैं जिनके पास हमारा वकालतनामा सुरक्षित है। और जो हमारे मुख्तार की हैसियत से हमारी पैरवी करते प्रतीत होते हैं।

[1] आज का हिंदी नाटक : प्रगति और प्रभाव, डॉ दशरथ ओझा, राजपाल एंड संस दिल्ली , प्रथम संस्करण 1984, पृ.,76
[2] समकालीन हिंदी नाटककार , गिरीश रस्तोगी, इंद्रप्रस्थ प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 1982, पृ.49
[3] आज का हिंदी नाटक : प्रगति और प्रभाव ,डॉ दशरथ ओझा, पृ.84

[4] पर्वत के पीछे ,लक्ष्मीनारायण लाल,सेंट्रल बुक डिपो , इलाहाबाद, प्रथम संस्करण1952, भूमिका से

[5] नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल की नाट्य–साधना, नरनारायण राय, सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1979,पृ. 45
[6] नटरंग ,संपादक नेमिचन्द्र जैन ,मार्च 1962
[7] रक्तकमल,डा.लक्ष्मीनायण लाल , 'यह रक्तकमल' से , पृ 15

[8] कलंकी, डा.लक्ष्मीनारायण लाल ,'कलंकी नाटकःकुछ प्रस्तुतिकरण के प्रसंग में' से

[9] व्यक्तिगत, डा.लक्ष्मीनारायण लाल ,'निर्देशक की बात': एम के.रैना

[10] एक सत्य हरिश्चंद्र ,डा.लक्ष्मीनारायण लाल , 'पूर्व–रंग'कृपाल जैकब,पृ.10